सारांश

"साहित्य की सामाजिक भूमिका : आदिवासी लोकगीतों के विशेष संदर्भ में"

मेरे लघु-शोध प्रबंध कार्य में मैंने मध्यप्रदेश के बड़वानी जिले के देवली, सोलवन, साकड़, खुरमाबाद एवं शिवन्या गाँव का भ्रमण किया। इस भ्रमण के दौरान मैंने 72 आदिवासी लोक गायक/गायिकाओं से बारेली बोली के लोकगीतों का संकलन किया। फिर मैंने इन लोकगीतों का हिंदी में अनुवाद किया व साथ में इन गीतों का आदिवासियों के जीवन में क्या महत्त्व है? इसके साथ ही 10 लोक गायक/गायिकाओं का साक्षात्कार भी लिया। इन सभी लोगों से मुझे बहुत सी महत्वपूर्ण जानकारियां प्राप्त हुई। इस बात को कहने में मुझे कोई झिझक नहीं हो रही है कि आज तक इन आदिवासी लोक गायकों एवं गायिकाओं का किसी ने न कभी साक्षात्कार लिया न ही इनके गीतों का संकलन किया। इन सभी लोगों के पास भरपूर ज्ञान भरा है जो पूर्ण रूप से मौखिक ही है, जिसे आज लिखित कर बचाने की जरुरत है तभी इनकी आने वाली पीढ़ी अपनी संस्कृति, ज्ञान, अपनी अस्मिता को बचा सकती है। लोकगीतों के माध्यम से मुख्यधारा के लोग आदिवासी समाज की वास्तविकता को जान सकते है।

मैंने अपने लघु शोध-प्रबंध कार्य को चार अध्यायों में विभाजित किया। जिनमें पहला अध्याय **'मध्यप्रदेश के आंचलिक लोकगीतों का परिचय एवं बड़वानी, झाबुआ व अलीराजपुर जिले के आदिवासी'** है। इस अध्याय में मैंने चार-उपाध्याय बनाए है। प्रथम उप-अध्याय के अंतर्गत मैंने मध्यप्रदेश के आंचलिक लोकगीतों का परिचय दिया है। दूसरे, तीसरे एवं चौथे उप-अध्याय में मैंने पश्चिम मध्यप्रदेश के भील, भिलाला एवं बारेला जनजाति का परिचय देते हुए उनकी आर्थिक, धार्मिक, सामाजिक स्थिति का वर्णन किया है।

पहले उप-अध्याय के अंतर्गत कुछ मुख्य बातें हमारे सामने आई।

- मध्यप्रदेश न केवल देश का विशाल राज्य है, वरन एक प्रमुख अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति बहुल प्रदेश भी है । यहाँ के समस्त भोगोलिक विस्तार में चार प्रमुख सांस्कृतिक अंचलों का फैलाव है , बुंदेलखंड, मालवा, निमाड़ एवं बघेलखंड। यह प्रदेश मिश्रित संस्कृति का अनूठा आदर्श है, यहाँ लोकगीतों पर इसका प्रभाव पड़ा है।
- मध्यप्रदेश की प्रमुख बोलियाँ हैं– बुन्देली, बघेली, मालवी एवं निमाड़ी। इनके अतिरिक्त गोंडी, भीली, कोरकू, भिलाली, बारेली आदि भी बड़े क्षेत्र में बोली जाने वाली बोलियां हैं। इन सभी बोलियों के अपने-अपने लोकगीत हैं।

दूसरे, तीसरे एवं चौथे उप-अध्याय में निम्न मुख्य बाते निकलकर हमारे सामने आती वे निम्न हैं

- मध्यप्रदेश में जनजाति बाहुल्य प्रदेश है। यहाँ मुख्यत: भील, कोरकू, गोंड, बैगा, भारिया, कोल, सहरिया जनजाति रहती हैं।
- भील जनजाति से ही निकली हुई बारेला एवं भिलाला जनजाति हैं। इनका निवास मध्यप्रदेश के बड़वानी, खरगोन, झाबुआ, धार एवं अलीराजपुर जिले हैं।
- भील, भिलाला एवं बारेला समाज का रहन-सहन, शारीरिक विशेषताएं, सामाजिक , आर्थिक स्थिति लगभग एक जैसी होती। इन तीनों जनजातियों की आजीविका मुख्य: कृषि पर निर्भर है। हालाँकि वर्तमान में कुछ लोग नौकरी एवं रोजगार की ओर अग्रसर हो रहे हैं।

द्वितीय अध्याय **'- मध्यप्रदेश के भील, भिलाला और बारेला जनजाति के लोकगीत'** के नाम से बनाया है। इस अध्याय को मैंने पांच उप-अध्यायों में विभाजित किया है। जो इस प्रकार से है विवाह के लोकगीत, होली के लोकगीत, दीपावली लोकगीत,नवाय के लोकगीत एवं चेतना के लोकगीत।

- आदिवासी समाज में लोकगीतों का बहुत महत्व होता है। इनके लगभग प्रत्येक पर्व, सांस्कृतिक कार्यक्रम में लोकगीत होते हैं।

- कुछ गीतों से इनके समाज में चेतना आई जिससे ये अपने अधिकारों को जानते हैं।
- इन गीतों से इनको मनोरंजन के साथ-साथ कई सारी शिक्षा भी मिलती हैं। जिससे ये अपनी संस्कृति को बचा कर रख सकते है।
- अधिकतर लोकगीत एक-पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी सीख जाती हैं। लेकिन कुछ नए गीतों का सृजन का कार्य भी इन आदिवासी समाज में हो रहा है।
- भील, भिलाला एवं बारेला के मुख्यत: नवाय, होली, दीपावली त्यौंहार होते हैं। इनके त्योहार कृषि से जुड़े हुए होते है। जब किसानों के खेतों में नई फसल (चवला, मुंग, ककड़ी, कचरा) पक जाती है। तब नवाय मनाते है एवं जब खेतों में धान पाक जाता दीपावली मनाते हैं। इन दोनों त्यौंहारों में फसल की पूजा की जाती है उसके बाद से ही लोग उस फसल को खाना शुरू करते है। मूलतः नई फसल की शुरुआत के लिए इन त्यौंहारों को आदिवासी समाज मनाता हैं। इस दिन लोकगीतों को बड़े हर्ष-उल्लास के साथ या जाता हैं।

तृतीय अध्याय **आदिवासी लोकगीतों की भूमिका** के नाम से बनाया है। इस अध्याय को मैंने पांच उप अध्यायों में विभाजित किया है-।

- आदिवासी समाज के सामाजिक कार्यक्रमों में लोकगीतों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। ये लोकगीत समाज को अपनी संस्कृति, अस्मिता व ज्ञान की शिक्षा देते हैं। आदिवासी समाज का अधिकतर ज्ञान इस माध्यम से एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को स्थानांतरित होता है।

- आदिवासों लोकगीतों का सांस्कृतिक महत्व बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। आदिवासियों के लोकगीत की उत्पति इनकी संस्कृति के आधार पर होती है। इनके पर्व,त्यौहार, रीतिरिवाज पर अलग-अलग लोकगीत होते है। इनके त्यौहार नवाय,दीवाली, होली, इंदल के गीत है। इन गीतों से लोगों को कई सारा ज्ञान मिलता है।

- आदिवासी समाज में पहले के लोकगीतों का इतना प्रभाव था जिससे बीमार लोग ठीक हो जाते थे।

- आदिवासों लोकगीतों का सांस्कृतिक महत्व बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। आदिवासियों के लोकगीत की उत्पति इनकी संस्कृति के आधार पर होती है। इनके पर्व,त्यौहार, रीतिरिवाज पर अलग-अलग लोकगीत होते है। इनके त्यौहार नवाय,दीवाली, होली, इंदल के गीत है। इन गीतों से लोगों को कई सारा ज्ञान मिलता है।

- आदिवासी लोकगीतों का धार्मिक पक्ष से भी संबंध है। आदिवासी समाज प्रकृति पूजक है। यह पहाड़, पेड़-पौधे, जल, धरती, वायु की पूजा करते है इनके प्रत्येक घर में घिन्चरी माता (चूल्हे के पास एक लकड़ी गाड़ी जाती है) स्थापित की जाती है। बाबदेव, हिन्दला, रानीकाजल प्रमुख देवी-देवता है। एक बात विशेष है इनके देवी-देवताओं की कहीं फोटो व मूर्ति नहीं होती नहीं होती। इनके कई सारे लोक गीत इन्ही देवी-देवताओं के संबधित है।

- आदिवासी लोकगीतों के सन्दर्भ में देखा जाए तो कहीं न कहीं राजनैतिक और लोकगीतों आपसी संबंध हमें स्पष्ट दिखाई देता है। आज आदिवासी समाज में भी राजनैतिक पक्ष हावी होता जा रहा है , गाँवों में चुनाव आने के कारण लोगों में आपसी भाईचारा,सहयोग की भावना धीरे-धीरे समाप्त होती जा रही है।
- आदिवासी लोकगीतों की उत्पत्ति के पीछे आर्थिक पक्ष भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। क्योंकि किसी भी समाज की सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनितिक स्थिति उस समाज की आर्थिक स्थिति पर निर्भर करता है। आदिवासी समाज मुख्यत: कृषि आधारित है इनके कई सारे लोकगीत कृषि आधारित, श्रम के है।

जैसे-

चाफरया मां कुंवू खोंदो

बयड़े कमाई देखने कांहनी आवी

इस लोकगीत में बताया गया है, की आदिवासी समाज कितना श्रमशील रहता है, वह कठोर से कठोर कार्य करता है। वह अपनी मेहनत के द्वारा एक किसान की भूमिका निभाता है।

इस गीत में बताया है कि एक किसान कठोर परिश्रम के बाद पत्थरों में कुँवा खोदता है और उसमें से पानी निकालता है, उसके बाद वह ऐसे पहाड़ पर जहां फसल ऊपजाना बहुत ही मुश्किल होता है ऐसी जगह पर फसल ऊपजाता है।

इस प्रकार से एक और लोकगीत जिसमें आदिवासी समाज की मेहनत को दिखाया गया है।

चतुर्थ अध्याय **'आदिवासी लोकगीतों की वर्तमान स्थिती' के नाम से बनाया है।** इसके अंतर्गत वर्तमान में इन गीतों में हुए बदलाव एवं समस्याओं को दिखाया है। कुछ बिंदु हमारे सामने निकलकर आते हैं वे निम्न हैं -

- वर्तमान में भारत के आदिवासी भाषाओं में कम से कम 1500 से अधिक लेखक हैं जो नियमित रूप से साहित्य रच रहे हैं। अकेले संताली में ही लेखकों की संख्या 1000 से ऊपर है। हर साल झारखण्ड और देश के दूसरे आदिवासी क्षेत्रों में लगभग 100 पुस्तकों का प्रकाशन और लोकार्पण होता है। कई सारी आदिवासी साहित्यिक पत्रिकाओं का भी प्रकाशन हो रहा है। राष्ट्रीय स्तर पर देशज और आदिवासी लेखकों के कई बड़े संगठन हैं जिनमें झारखंडी भाषा साहित्य संस्कृति अखड़ा, ऑल इंडिया संताली राइटर्स एसोसिएशन, कुड़ुख लिटेरेरी सोसायटी, आदिवासी साहित्य सम्मेलन महाराष्ट्र आदि प्रमुख हैं। जो मूलनिवासियों और आदिवासियों के नेतृत्व में संचालित हैं। समुदाय स्तर पर भी हर समुदाय का अपना साहित्यिक संगठन है। जैसे, मुण्डा साहित्य सभा, बोड़ो साहित्य सभा आदि।

- आदिवासी साहित्य धीरे-धीरे प्रगति पर है किंतु भील, भिलाला और बारेला समाज साहित्यिक रूप से पिछड़ा हुआ है। इस समाज में शिक्षितों की संख्या में धीरे-धीरे वृद्धि तो हो रही है किंतु साहित्य के क्षेत्र में कोई विशेष कार्य नहीं हो रहा है। इन समुदायों के पास आज अपने लोकगीत, लोकगाथा, लोककथा मौखिक रूप से है जिन्हें लिखित रूप में बदलना अति महत्वपूर्ण कार्य ताकि इनका अपना मूल साहित्य बचा रहे।

समस्याएँ

- शिक्षित युवा लोकगीत भूलते जा रहे है।
- अपनी भाषा संस्कृति को धीरे-धीरे भूल रहे है यह बहुत बड़ी समस्या है अगर आदिवासी समाज अपनी भाषा एवं संस्कृति को भूल जायेगा तो तो उसकी अस्मिता पर खतरा आ जाएगा।
- आदिवासियों के ढोल, मांदल, थाली जैसे वाद्यों की जगह बैंड-बाजा आ रहा है जिससे आदिवासी समाज के नाच एवं लोकगीतों के अस्तित्व पर भी खतरा मंडरा रहा है।
- आदिवासी लोकगीतों का लिखित संकलन नहीं है।

इस लघु- शोध कार्य के निष्कर्ष

- आदिवासी समाज के लिए लोकगीत का बहुत ही महत्त्व है, उनके जीवन में लोकगीत एवं संगीत जीवन भर साथ रहता है। इनको लोकगीतों से मनोरंजन के साथ अपने समाज की संस्कृति, अपने रीतिरिवाज, त्यौंहार, पर्व के अस्तित्व को बचाने का ज्ञान भी मिलता है।
- इनके लोकगीत इनके जीवन में उत्साह भर देते है। जब थाली व ढोल की ताल बजने लगता हो तो इनके पैर थिरकने लगते है व स्वत: ही इनके मुख से लोकगीत निकलने लगते है।
- कुछ समय पहले इनके लोकगीतों द्वारा बीमार लोग तक सुधर जाते थे। आज भी लोकगीतों से लोग तनाव मुक्त हो जाते हैं।
- खेतों में निंदाई, बुवाई करते समय गीत गाने से इन्हें थकान नहीं होती जिससे कठिन से कठिन कार्य को भी ये आसानी से कर लेते है।
- आदिवासी लोकगीतों में आधुनिकरण का प्रभाव दिखाई देने लगा है। आज के लोकगीतों में उपभोगवादी वस्तुएं आ गई है।

- वर्तमान में कुछ आदिवासी युवा, युवतियों लोकगीतों के आधार पर ही नए गीतों का सृजन कर है। उन गीतों की सीडी व केसेट बनाकर ये अपने आर्थिक पक्ष को मजबूत कर रहे हैं।
- कुछ आदिवासी संगठन पिछले 15-20 सालों से आदिवासी को अंपने अधिकारों, स्वाभिमान, आत्मसम्मान, संस्कृति को बचाने, तथा आदिवासी समाज पर हो रहे अत्याचार, अन्याय, दमन, शोषण के खिलाफ आवाज उठाने के लिए लोगों को जागरूक कर रहे है। लोगों में लोकगीतों, जनगीतों के माध्यम से चेतना लाने का कार्य किया जा रहा है।

- वर्तमान में आदिवासियों के विवाह के लोकगीतों की जगह केसिओ ने तो ढोल, मांदल व थाली की जगह बैंड बाजा आ चूका है जिससे पहले की तरह लोकगीत व नाचने के तरीके में कमी आ रही है।

- शिक्षित आदिवासी युवाओं के हाथों में मोबाइल आने के कारण उनका का रुझान लोकगीत से हटकर फ़िल्मी गीतों की और अधिक जा रहा है।

- वर्तमान समय में मध्यप्रदेश के आदिवासी समाज में लोकगीत की लोकप्रियता आज भी बनी हुई है। आदिवासी युवा गायक इन लोकगीतों को गाकर, सीडी एवं केसेट बनाकर अधिक से अधिक लोगों तक पहूँचा रहे हैं। इन गायकों में आनंदी भावेल, चम्पालाल, संजय किराड़े, बंटी, बबली, दयाराम बरडे, प्यारसिंह एवं कमलेश ठाकूर प्रमुख हैं।